Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 15, Issue No. 12, December-2018, ISSN 2230-7540

स्त्री विमर्श

Dr. K. L. Tandekar[1]* Dr. (Smt.) E. V. Revaty[2]

[1] Principal, Govt. Nehru PG College, Dongargarh, District-Rajnandgaon (C.G.)

[2] Assistant Professor (Commerce), Govt. Nehru PG College, Dongargarh, District-Rajnandgaon (C.G.)

सार - हमारे भारतीय समाज में आदिकाल से ही, पुरुष, नारी-शक्ति स्वरूप देवी की पूजा- अर्चना, 'या देवी सर्वभूतेषु' के मन्त्रोच्चारण से करते आ रहे हैं, लेकिन जब किसी औरत के मान-मर्यादा की बात आती है, तब वे विदक जाते हैं। इस दोहरेपन का श्रेय बहुत हद तक हमारे 'मनुस्मृति' और अन्य उस तरह के शास्त्रों को जाता है, जिसमें नारी को घर की सजावट और पुरुषों के मन बहलाने का खिलौना माना गया है। अन्यथा पांचाली दावँ पर नहीं लगती,सत्य हरिशचन्द्र अपने दान की दक्षिणा चुकाने अपनी स्त्री, शैव्या को नहीं बेचते, राम द्वारा सीता की अग्नि- परीक्षा नहीं ली जाती।

----------X----------

प्रस्तावना

हमारे शास्त्रों में इस तरह की कहानियों या किस्सों से यह साफ़ जाहिर होता है कि उस समय हमारा समाज कितना मनुवादी था? महात्मा बुद्ध को ही लीजिये वे भी पितृसत्तात्मक मूल्यों के विरुद्ध, स्त्री के पक्षधर थे, ऐसी बात नहीं थी। अंबपाली की स्वीकार, उसी पितृसत्तात्मक मूल्यों के अधीन वेश्यावृति को मान्यता प्रदान करना था।

कहते हैं, जब बुद्ध ने संघ की स्थापना की ,तो शुरू में औरतों को मर्दों की तरह, दास बनकर आना मना था। उन्होंने अपने संघ में स्त्रियों को जगह नहीं दी; लेकिन उनके चचेरे भाई, आनंद चाहते थे कि स्त्रियों को भी पुरुषों की तरह संघ में बराबरी की भागीदारी मिले। उन्होंने बुद्ध से इसके लिए तर्क-वितर्क भी किया, पर बात जब नहीं बनी ,तो उन्होंने समझाने की कोशिश करते हुए बुद्ध से पूछा,' क्या औरतें अगर कोशिश करें तो निर्माण प्राप्त कर सकती हैं?' इस पर जवाब में बुद्ध ने कहा, 'हाँ, क्यों नहीं, प्राप्त कर सकती हैं।' तब आनंद ने बड़ी ही नम्रता से कहा,'तो फ़िर आप उन्हें संघ में आने क्यों नहीं देते ?' सच तो यह है कि ,स्त्रियों के शुभेक्षु, ,बुद्धकाल में एकमात्र आनंद थे, जो चाहते थे कि स्त्रियाँ आगे आयें। उनको भी पुरुषों की तरह संघ में जगह मिले। उनका सोचना था, स्त्री और पुरुष, दोनों ही बराबर के निर्माण का हकदार हो सकते हैं। जब कि, बुद्ध की माता गौतमी, जहाँ-जहाँ बुद्ध जाते थे, वे वहाँ साथ जाती थीं।

दुख की बात है कि सम्पूर्ण बुद्ध-साहित्य में कहीं भी आनंद के सिवा दूसरे किसी व्यक्तित्व का वर्णन नहीं मिलता है, जिसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि बुद्ध या बौद्ध धर्म स्त्रियों के प्रति उदार था। अंगुत्तर निकाय (खंड 2, पृष्ठ-76) में स्त्रियों का दरबार में नहीं होने पर बुद्ध से अपनी नाराजगी जताते हैं। आखिरकार बुद्ध स्त्रियों को अपने कायदे के अनुसार संघ में आने दिये, नियम के अनुसार भिक्षुणियों को भिक्षुओं के नीचे दबे रहना था।

इस तरह संघ को दो दर्जों में बाँट दिया , साथ ही भिक्षुणियों के लिये दश कड़ी शर्तें रख दीं, जिसके पालन करने के पश्चात ही औरतें संघ में आ सकती थीं। जिनमें एक था, स्त्री-स्मिता को सबसे अधिक चोट पहुँचाने वाला नियम, भिक्षुणी चाहे जितनी भी बलिष्ठ हो, उसके सामने कोई कमजोर कनिष्ठ भिक्षु आ जाये, तो उसका सम्मान सर झुकाकर करना होगा और भिक्षुणी को सजा, भिक्षु के वनिस्पत, ज्यादा कठोर होगा। इस प्रकार स्त्री पर लादे गये लगभग सभी नियम सख्त थे और स्त्री स्मिता को चोट पहुँचाने वाले थे। बुद्धकाल में केवल बाहर ही नहीं, संघ के भीतर भी स्त्री को पुरुष के अधीन ,उसकी मर्जी के अनुसार जीना होता था। जातकों में उल्लेखित तथ्यों को पढ़ने से यह साफ़ हो जाता है कि बुद्ध का स्त्रियों के प्रति विचार क्या था? लगभग हर जगह स्त्रियों को काला नाग, व्यभिचारिणी, रहस्यमयी और मोहिनी, पुरुषों को अपने मोह- जाल में फ़ंसानेवाली कहा गया है (स्त्री-स्मिता के लिए इससे अधिक अपमानजनक और क्या हो सकता था? स्त्रियों का सामाजिक एवं धार्मिक कर्मों में हिस्सेदारी निभाने का कोई हक नहीं था।

www.ignited.in

परवर्ती ब्राह्मण साहित्य में भी, कहा गया, स्त्रियाँ अपने पति और पुत्र की निगरानी में ही सुरक्षित रह सकती हैं।

ठीक यही बात बौद्ध साहित्य में स्त्रियों की मूल भूमिका, 'पति की विश्वासी सेविका थी'। इस तरह स्त्री जाति की पीड़ा और वेदना कभी कम न थी, आज भी नहीं है। जब कि हम 21 वीं शताब्दी में प्रवेश का दावा करते हैं, जहाँ खाने-पीने, उठने- बैठने, हर काम में आधुनिकता झलकती है, फ़िर भी आज स्त्रियाँ ,पुरुषों का उत्पीड़न झेलती हैं। ऊँची- ऊँची दीवारों के भीतर, घरों में हर चीज के रहते हुए, सन्नाटे के साये में खामोश जीती हैं। उन्हें बच्चों और पति के फ़ैलाव के अलावा और कुछ सोचने का अधिकार नहीं मिला है। उनकी पीड़ा, आकाश की तरह है, जिसका कोई ओर-छोर नहीं होता।

फ़िर भी अपने पति को खुश रखने के लिए, झूठी मुस्कान को लिहाफ़ की तरह ओढ़कर पति के सामने खड़ी रहती है। अपनी भावनात्मक उजाड़पन को, महसूस करने के बावजूद आँखों के आँसू को टपकने नहीं देतीं, बल्कि उसे पी जाती हैं। अपने जीवन की लक्ष्यहीन त्रासदी को भलीभाँति जानती हुई भी, अपने बेजान कँपकंपाती पहचान को बनाये रखने की नाकामयाब कोशिश में लगी रहती हैं। खुद को टुकड़े-टुकड़े में बँटते देख मन ही मन बिफ़रती रहती हैं, लेकिन किसी भी हाल में इसका मुकाबला करने की कोशिश नहीं करतीं। पंखहीन पक्षी की तरह छटपटा कर रह जाती हैं।

परिवार के सभी सदस्यों को अपनी सेवा से खुशी देनेवाली नारी, भीतर कितनी अकेली है, परिवार का कोई सदस्य, जानने तक का जुर्रत नहीं करता। हमारे समाज की यह सोच ,स्त्री-पुरुष के वनिस्पत, दिमागी तौर पर अधिक कमजोर होती है, सरासर गलत है। हमारे धर्म-शास्त्रों में नारी ,सर्व शक्ति सम्पन्न मानी गई है। विद्या, शक्ति, ममता, यश और सम्पत्ति का प्रतीक समझी गई है। वैदिक, युगीन क्षेत्र में नारी का स्थान, पुरुषों के समकक्ष था। उस जमाने में शिक्षित कन्या की प्राप्ति के लिए विशेष अनुष्ठान भी किया जाता था 'अथ या इच्छेद दुहिता में पंडिता जायतेसर्वमायुरिया दिति तिलोदनं पाचायित्वा सर्पिष्मन्त श्रीयाता मीश्वरो जनचित वै (बृहद उपनिषद)' उस काल में स्त्रियाँ भी पुरुषों की तरह ब्रह्मचर्य पालन करती हुई शिक्षा ग्रहण करती थी और विदुषी बनती थीं। कुछ स्त्रियाँ तो अपना जीवन विद्याध्ययन में ही गुजार देती थीं। अर्थशास्त्र में स्त्रियाँ निपुण थीं। सभा- गोष्ठियों में वे ऋग्वेद की ऋचाओं का गान किया करती थीं। रामेशा, अपाला, उर्वशी, विश्वतारा, सिकता, निबावरी , घोषा, लोपामुद्रा आदि पंडित स्त्रियाँ, इनमें प्रसिद्ध थीं। ये सभी पति के साथ समान रूप से धार्मिक, सामाजिक अनुष्ठानों में भाग लेती थीं। द्वापर काल में पाण्डवों की माँ, कुंती , अर्थवेद में पारंगत थीं। कन्या के लिए उपनयन का विधान , मनु ने भी किया था। ऋषि कुशध्वज की कन्या वेदवती, ऐसी ब्रह्मवादिनी स्त्री थी। काश क्रत्सनी नामक स्त्री ने मीमांसा जैसे क्लिष्ट और गूढ़ विषय पर बहुचर्चित पुस्तक का प्रणयन भी किया था , जो बाद में उसी के नाम पर चर्चित हुई। याग्यवल्वय की पत्नी मैत्रेयी, एक विख्यात दार्शनिका थी। उसने तो केवल ग्यानप्राप्ति की अनुमति पाने के लिए, अपने पति की सम्पत्ति में अपना अधिकार त्याग दिया और अपने हिस्से का धन, अपने पति की दूसरी पत्नी को दे दिया।

राजा जनक की राजसभा में होने वाली विद्वद्जनों की सभागोष्ठी में गार्गी ने अपनी अद्भुत शक्ति से याग्यवल्वय को चैंका दिया था; कौशल्या और तारा, दोनों मंत्रविद थीं। द्रोपदी पंडिता थीं, वे नित्य वैदिक प्रार्थनायें किया करती थीं। सह शिक्षा का ऐसा उदाहरण महाभारत काल में भी मिलता है, जब अम्बा और शैखावत्य, एक साथ शिक्षा ग्रहण करते थे।

बौद्धकाल में आनंद के प्रयास से जब संघ में स्त्रियोगं को आने का अधिकार प्राप्त हुआ, शिक्षा के क्षेत्र में अनेकों स्त्रियाँ ख्याति प्राप्त कीं। इन भिक्षुणियों में बत्तीस तो आजीवन ब्रह्मचारिणी थीं; उनमें शोभा, सुमेधा और अनोपमा उच्चवंश की कन्याएँ थीं। राजगृह के सेठ की पुत्री यद्राकुंडकेशा ग्यानवान महिला थीं। पूर्व वैदिक काल में अपला नमक कन्या ,अपने पिता के कृषि-कार्य में पूर्णरूपेण सहयोग करती थीं। उस युग में कन्याएँ गाय दुहना जानती थीं ; इसलिए उन्हें दुहिता भी कहा जाता था। कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी हुई जो शासन- व्यवस्था और राज के प्रबंधन में भी दक्ष होती थीं। मत्सग की महारानी ने सिकंदर के आक्रमण का प्रतिरोध पति की मृत्यु के पश्चात किया था। विक्रमादित्य की पुत्री प्रभावती गुप्ता ने अपने पति की मृत्यु के बाद, पुत्र की अल्पावस्था के कारण स्वयं शासन किया था। स्पष्ट है कि महिलायें ग्यान-विग्यान, तर्क-वितर्क, शासन, युद्ध ,सब कुछ कर सकती हैं। उनको केवल समाज से मौका मिलना चाहिये। बेटियाँ, बेटों से कम नहीं होतीं।

निष्कर्ष

शायद पुरुषों को यह समझ अभी तक नहीं आई या आई भी तो मानने के लिए तैयार नहीं है, कि जब तक स्त्रियों को समाज में उचित मान-सम्मान और पुरुषों के बराबर का दर्जा नहीं मिलेगा, स्त्री, शिक्षा और आर्थिक उत्थान से दूर रहेगी और जब तक यह नहीं होगा, तब तक हमारा समाज पिछड़ा रहेगा। खुशी की बात है कि आजकल पुरुषों के द्वारा भी, कविता, कहानी के जरिये स्त्रियों की दयनीय अवस्था को महसूस करने की कवायद शुरू हो चुकी है। जिस दिन स्त्री-पुरुष के बीच की

www.ignited.in

अधिकारिक भिन्नता मिटेगी, बेटियों को भी बेटे की तरह, पिता के धन में बराबर का हिस्सा मिलना शुरू होगा, उसी दिन पालकी और अर्थी वाली कहावत खत्म हो जायगी।

बेटी, ससुराल वालों की प्रताड़ना को सहने के लिए मजबूर नहीं होगी। वह वापस अपने घर आ सकेगी। जब तक समाज इसे कबूल नहीं करेगा, बेटियाँ बहू बनकर जलती रहेंगी। उनमें कभी आत्मसम्मान, आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता की बात नहीं आयगी। मेरी समझ में महिला सबलीकरण की मुहीम केवल संसद में नहीं, उसके साथ पीहर में भी होनी चाहिये। जब तक बेटियों को निजी जिंदगी में ,पैतृक सम्पत्ति में हिस्सा नहीं मिलेगा, संसद में सबलीकरण के विल को पास करवाकर कुछ नहीं होगा।

उपसंहार

आर्थिक रूप से कमजोर व्यक्ति सामाजिक उत्पीड़न का मुकाबला नहीं कर सकता। धन का अभाव उसे आत्महत्या करने के लिए मजबूर करता है। इसलिए सामाजिक और धार्मिक जीवन, दोनों में ही, स्त्रियों की पुरुषों के साथ, समान हिस्सेदारी होनी चाहिये। अन्यथा , खुद प्रकृति कही जाने वाली नारी, प्राकृतिक, लौकिक, अलौकिक सभी सुखों से दूर जीती रहेगी ; उसके जीवन में कभी कोई प्रकाश नहीं आयगा।

सन्दर्भ सूची

1. हिन्दू स्त्री का जीवन. पं. रमाबाईय संवाद प्रकाशन, मेरठ पृ. 90
2. नारी का अवतरण, एलीन मारगनय संवाद प्रकाशन, मेरठ पृ. 225
3. वही, पृ. 225-226
4. वही, पृ. 226
5. डॉ. नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर बुक्स, १९७३, पृ. ४३२
6. डॉ. नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर बुक्स, १९७३, पृ. ४३२
7. डॉ. नगेन्द्र, हिंदी साहित्य का इतिहास, मयूर बुक्स, १९७३, पृ.४३२-४३३
8. डॉ. हेमंत कुकरेती. हिंदी साहित्य का इतिहासए सतीश बुक डिपो, २०१६, पृ, २३७

Corresponding Author

Dr. K. L. Tandekar*

Principal, Govt. Nehru PG College, Dongargarh, District-Rajnandgaon (C.G.)

www.ignited.in